P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-VII March-2015
E: ISSN NO.: 2349-980X

भारतीय और पाश्चात्य जीवन के केन्द्र में स्त्री संदर्भ : एक जमीन पर

बिजेन्द्र कुमार
अध्यापक,
हिन्दी विभाग,
माईकल मधुसूदन मेमोरियल कालेज,
दुर्गापुर, पश्चिम बंगाल

सारांश

उत्तर–आधुनिक समय में स्त्री शिक्षा व चेतना में आये नये उभार, बदलाव और विस्तार की वजह से उसके प्रति सामाजिक नजरिये में भी परिवर्तन आया है। यही कारण है कि सनातनी व्यवस्था की तुलना में स्त्रियाँ आज अत्यधिक साहसी, स्वावलम्बी, स्व अधिकार, सचेत तथा आत्मबोध के प्रति पूर्ण सजग और संवेदनशील दिख पड़ती है। यह सकारात्मक बदलाव समय–समाज में एक अनोखी कशमकश की स्थिति के बीच पल रहा है। आज स्त्रियों को एक तरफ शिक्षा, नौकरी करने की भरसक छूट दी गई है तो दूसरी ओर उनके पैरों में अब भी परंपरागत संस्कारों की बेड़ियाँ बंधी पड़ी है। वह पुरूषवादी मानसिकता और रूढ़ियों पर आधारित पारिवारिक, सामाजिक व आर्थिक बंधनों आदि से मुक्ति की आकांक्षा में प्रयत्नशील नजर आती है। फिर भी पुरूष वर्चस्ववादी समाज में उसकी हिस्सेदारी बड़ी तीव्र गति से आगे की ओर बढ़ रही है। यह अब तक का सच ही रहा है कि कोई भी संघर्ष अपनी पहचान से जुड़कर ही सार्थक सिद्ध होता है। आज समाज की स्त्रियाँ अपनी इस आइडेन्टीटी को जानने में सफल हुई हैं तथा आज के इस गुलामी की मानसिकता को तोड़कर अपना स्वतंत्र वजूद पाना चाहती हैं। वर्तमान दौर में स्त्रियों का एक बड़ा तबका नौकरी पेशे से जुड़ा रहा है। घर, परिवार के विकास के साथ–साथ आज व्यक्तिगत स्त्री की स्वतंत्रता भी उसके कामकाजी होने में लक्षित होती है। पर कारोबार की अपनी दुनिया है वहाँ भी स्त्रो के साथ अनाचार का खेल जारी है। कहीं न कहीं उसका शारीरिक और मानसिक उत्पीड़न वहाँ भी होता है। ऐसे में वह अपने को टूटती, बिखरती पाती है। स्थिति ऐसी है कि आज भूमंडलीकरण के दौर में बढ़ते पाश्चात्य संस्कृति के दबाव से स्त्री में अपना सर्वस्व खोने का भय उसे निरंतर सताता है। चित्रा मुद्गल का उपन्यास 'एक जमीन अपनी' में महानगरीय जीवन के चकाचौंध में पिसते स्त्री जीवन की घुटन और पीड़ा के साथ संघर्षरत आधुनिक जीवन में आगे बढ़ने की जद्दोजहद है।

मुख्य शब्द : भूमण्डलीकरण, विज्ञापन, आधुनिकता

परिचय

चित्रा मद्गल आठवें दशक की बहुचर्चित और प्रतिभा संपन्न लेखिका हैं। हिन्दी कथा साहित्य में चित्रा जी का आगमन उस समय समाज की देन है जिस समय भूमंडलीकरण, खुला बाजार, आधुनिकता अपना पैर पसार रहा था। जिसका व्यापक प्रभाव स्त्री जीवन पर भी पड़ा। इसी समय स्त्रीयों की पीड़ा, दर्द, उसकी अपनी चाह और आजादी को लेकर प्रचुरता में महिला लेखिकाओ के द्वारा साहित्य लिखा जाने लगा। उसके संघर्ष और प्रगति के आधार पर उसकी स्वतंत्रता साहित्य मे स्वीकार की जाने लगी। इसी समय स्त्री मुक्ति का नारा भी साहित्य में तेज होता है। जिससे चित्रा भी अछूती नहीं है। चित्रा जी स्त्री की पीड़ा और दर्द को अपने व्यक्तिगत जीवनानुभव से ग्रहण करती है। उसे जीती है उस पर अनवरत शोध करती है तब काफी मेहनत के बाद एक उपन्यास का सृजन होता है। उन्हीं के शब्दों में–"लेखन मेरे लिए आत्म रति नहीं, समाज की जड़ स्थितियों पर पहार की तरह है। अपने समय के समाज पर वह मेरा लेखकीय हस्तक्षेप है। हस्तक्षेप से भी दो कदम आगे एक तरह से वह मेरी चेतना का दायित्व है, सामाजिक दायित्व। किसी रचना को लिखने से पहले मैं जितनी बेचैन और उद्विग्र होती हूँ, लिखकर छप जाने के बाद भी वैसी बनी रहती हूँ, बल्कि पहले से ज्यादा बेचैन हो जाती हूँ, यह जानने के लिए कि मेरी बेचैनी पूरी तरह से पाठक तक संप्रेषित हुई या नहीं, क्योंकि रचनाएं जब तक एक्टीविस्ट की तरह काम नही करती, सामाजिक जड़ता पर प्रहार नहीं करती, पाठक को जागरूक नहीं बनाती, उसे शिक्षित नहीं करतीं तब तक उनका मकसद पूरा नहीं होता।"[1] स्पष्ट है कि चित्रा मुद्गल सामाजिक सरोकार, समाज जागृति को

अपने साहित्य का लक्ष्य मानती है। अपने साहित्य में वे स्त्रियों के अधिकारों की ही बातें नहीं करतीं, अपितु उत्तरदायित्वों के निर्वाह के प्रति भी उन्हें सजग करती हैं।

चित्रा जी अपने उपन्यास 'एक जमीन अपनी' में आधुनिक स्त्री की मनोदशा तथा अन्तर्द्वन्द्व को उभारकर भारतीय और पाश्चात्य जीवन को प्रस्तुत किया है। पूरे उपन्यास में विज्ञापन जगत के माहौल को कलमबद्ध कर आधुनिक स्त्री के अस्तित्व और अस्मिता की सार्थक और यथार्थ परिस्थिति की खोज को मुखर वाणी दी है। वर्तमान समय में आज आधुनिक स्त्री के समक्ष जीवन के दो महत्वपूर्ण पक्ष है– पहला परम्परागत संस्कार, जिसे सामंती संस्कार भी कहते हैं। सामंती समाज में घर की चार दिवारी में कैद स्त्री माँ, बहन, पत्नी, प्रेमिका, दासी आदि के रूप में अपना सम्पूर्ण जीवन होम कर देती हैं जिसमें उसका अपना वजूद तथा स्वतंत्र जीने की आकांक्षा नहीं रह जाती। दूसरा पक्ष पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध से अभिभूत हो सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति की अवहेलना करते हुये स्त्री के अस्तित्व बोध और आत्म बोध के स्थान पर उन्मुक्त, अनैतिक और उच्छृंखल आचरण करना। ऐसे में यहाँ एक बड़ा सवाल यह है कि क्या दोनों स्तरों पर स्त्री अपनी पहचान को कायम रख पा रही है या इससे हटकर कुछ और है?

वर्तमान दौर भूमंडलीकरण का है। जहाँ हर उत्पादित चीजों का नियंता बाजार है। ऐसे में स्त्री भला अपने को बाजार की उपभोक्ता होने से कैसे रोक सकती है। बाजार के बदलते दबाब में विज्ञापन की दुनिया के रंग–बिरंगे सपनों के साथ देह प्रदर्शन और सौन्दर्य प्रसाधनो के पैमानों को ही वह स्त्री की स्वतंत्रता व अस्मिता समझ रही है। 'एक जमीन अपनी' उपन्यास में "चित्रा जी ने एक अपेक्षकृत नये क्षेत्र विज्ञापन की दुनिया के मारक झूठ और सच, आकर्षण और जगमगाती सफेदी के भीतर छिपे ईष्या, मद–मत्सर की चिड़चिड़ाहट से हमें परिचित कराया है और बोल्डनेस के साथ अपनी इच्छा के विरूद्ध पूरूषों की दुनिया में एक बिकाऊ चीज बनती स्त्री की नियति पर उँगली रखी है।"[2] अतः कहना गलत न होगा कि स्त्री उसी 'वस्तु' में तब्दील की जाती रही है जिसके खिलाफ आज वो संघर्षरत है। सामंती समाज में स्त्री यदि भोग्या थी तो आज उत्तर आधनिक दौर में उपभोग्या बनकर रह गई हैं। अंतर बस इतना है कि सामंती समाज में स्त्री देह सौपने को अभिशप्त थी जबकि आज वही देह स्वेच्छा से सौप रही हैं लेकिन यहीं आकर 'वह' सवाल में तब्दील हो जाती ह? आर्थिक स्वावलम्बन स्वतंत्र अस्तित्व के कारण जहाँ स्त्री आत्मनिर्भर हो रही है तो वहीं परम्परागत रिश्तों के बोझ तथा वर्जनाओं से मुक्त हो रही है। आज आधुनिक स्त्री स्वयं को शिक्षित व स्वावलम्बी बना रही है समाज में अपनी पहचान स्थापित कर रही हैं। वह अपने को स्वतंत्राकांक्षी तथा नए चुनौतियों को स्वीकार करने वाली समझती हैं, वहीं उसकी उन्मुक्तता, उच्छृंखलता ने उसे अधिक विपन्नता और दयनीयता की स्थिति में ला खड़ा किया है।

चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'एक जमीन अपनी' में मॉडलिंग और विज्ञापन की दुनिया का विद्रूप और यथार्थ चित्र अंकित हुआ है। उन्होंने विज्ञापन की दुनिया के माहौल आर पूँजीवादी समाज द्वारा स्त्री के लिए बुने गए छद्म जाल का विशद चित्रण किया है। साथ ही स्त्री के उत्तरदायित्व का पूर्ण रूप से निर्धारण भी किया है। आज के विज्ञापनों में देह उघाड़ूचित्रण अधिक होता है, उत्पादों की विशेषताओं की चर्चा नाम मात्र की होती है। यदि स्त्री अपनी इच्छा से चुनी हुई भदेस आधुनिकता अपना रही है तो उसके लाभ–हानि का ताज भी उसे खुद पहनना पड़ेगा। कोई दूसरा इसके लिए उत्तरदायी नहीं होता है। चित्रा जी ने अपने इस उपन्यास में इसी की अभिव्यक्ति दी है।

'एक जमीन अपनी' उपन्यास में दो स्त्री चरित्रों अंकिता और नीता के द्वारा चित्रा जी ने विज्ञापन की दुनिया के सच को उजागर किया है। दोनों उपन्यास की केन्द्रिय नायिका है तथा दोनों ही विज्ञापन की दुनिया से जुड़ी है। दोनों में आत्मनिर्भरमा, स्वतंत्रता की कामना और संघर्ष है परन्तु दोनों के संघर्षों में काफी अंतर है अंकिता का चरित्र पूर्ण रूप से भारतीय परंपरा का पैरोकार है तो नीता का चरित्र पाश्चात्य संस्कृति की पैरवी करता है। अंकिता के माध्यम से लेखिका ने जहाँ एक ओर स्त्री के विज्ञापन जगत में अपना स्थान बनाने के लिए चल रहे संघर्ष की कथा कही है तो वहीं दूसरी ओर विभिन्न कंपनियों के मालिकों के रूप में दलालों का पर्दाफाश किया है जो स्त्री को सिर्फ विज्ञापन की चकाचौंध भर दुनिया में आने को बाध्य करते हैं ताकि अपने स्वार्थ की रोटियाँ सेकने के लिए उसके देह का उपयोग–उपभोग किया जा सके।

पूरे उपन्यास में शहरी परिवेश को चुनते हए चित्रा जी ने स्त्री जीवन के प्रश्न को न सिर्फ उठाया है बल्कि उसका समाधान भी भारतीयता के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। तभी तो प्रमिला के. पी. का कहना समीचीन लगता है कि "आकर्षक और मोहक कही जाने वाली विज्ञापन की दुनिया की कामकाजी स्त्रियों की आशा–आकांक्षाओं को उनकी कठिनाइयों के साथ प्रस्तुत करते आज हमारे समाज में चर्चित स्त्री मुक्ति आंदोलनों पर चित्रा जी ने अपनी संतुलित दृष्टि जोड़ दी है।"[3]

अंकिता विज्ञापन की दुनिया में तनाव के साथ हर पल जीती है। ग्लैमर की दुनिया से जुड़ी रह कर भी अपने संस्कार, संस्कृति, विचारधारा, नैतिक–चिंतन, जीवनानुभव आदि को न भूलते हुए उत्थान के मार्ग पर आगे बढ़ती हैं। इसमें भारतीय संस्कार की सारी विशेषताएँ भरी पड़ी हैं। जबकि नीता ग्लैमर की चकाचौंध की प्रवाहमयी धारा में अपने को बहनें और उसके रंग में रंग जाने को अपना संघर्ष मानती हैं जबकि वह रंगीन दुनिया की रौ में बहकर पतन के मार्ग पर अग्रसर होती हैं। नीता एक दिग्भ्रमित आधुनिक स्त्री है जो पुरूष समाज द्वारा अपने समाज के लिए स्त्री के संबंधों के छद्म रूप में जकड़ने के खिलाफ एक विद्रोहिणी रूप में दिख पड़ती हैं। परन्तु वास्तविकता यह है कि वह स्वकेन्द्रित स्त्री है और विवाह संस्था का विरोध करती हैं नीता सम्पन्नता, प्रसिद्धि और सफलता की चकाचौंध में भूल जाती है कि स्त्री के उच्छृंखलतापूर्ण कर्मों से समाज पर क्या और कितना प्रभाव पड़ता है। अंकिता कहती है–"तुम खुबसूरत हो, सेक्सी हो, यह कपड़ों के बावजूद छिप नहीं

पाता..... जरूरी है रातों रात नंबर वन बनने के लिए यह सब करना, जो स्त्री के लिए ही नहीं, सम्पूर्ण समाज के लिए अशोभनीय और लज्जा का विषय है। किन मूल्यों को जीना चाहते हो तुम? किनकी वकालत कपड़े उतार कर रही हो? आपादमष्तक ढ़की हुई स्त्री इस समाज में इज्जत नहीं रख पा रही है.....कपड़ों में न देखकर उसकी लोलुपता अधिक बलात्कारी नहीं हो उठेगी।"[4] यहाँ चित्रा जी ने पाश्चात्य संस्कारों के बढ़ते प्रचलन को दिखाया है जिसे नीता जैसी स्त्रीयाँ सहजता से अपना रही हैं तथा आगे बढ़ने में सक्रिय है। जबकि दूसरी ओर अंकिता आधुनिकता से सराबोर विज्ञापन जगत को अपनी शर्तों पर अपनाती है। यह उसकी बड़ी उपलब्धि है। कारण उसकी सोंच में भारतीय स्त्री समाज है जिसकी जड़ें स्वाधीनता, समानता और स्त्री अस्मिता के भारतीय संस्कारों से जुड़ी है। यानी इसका संघर्ष सम्पूर्ण भारतीय स्त्री का संघर्ष है। अंकिता स्त्री स्वतंत्रता को सकारात्मक तरीके से स्वीकार करती है। ग्लैमर की दुनिया से जुड़ी अंकित न केवल स्त्री को देह समझने वालों के और अन्याय के विरूद्ध डटकर खड़ी होती है बल्कि समय आने पर मालिकों को खरी–खोटी सुनाने से भी नहीं हिचकतो है।

अंकिता सामाजिक चेतना सम्पन्न प्रगतिशील स्त्री है। वह पुरूष समाज से होड़ लेना जानती है। वह आधुनिक समाज की पार्टी–संस्कृति में स्त्री को भोग–विलास समझने की प्रवृत्ति का प्रतिवाद करती हुई उसकी नग्नता, यथार्थता को उघाड़ कर रख देती है। वह स्त्रीत्व से मुक्ति नही चाहती बल्कि उन रूढ़ियों से मुक्ति की चाह रखती है जिसने स्त्री को केवल वस्तु बना कर रख दिया है। आब्जर्वेशन एडवटाइजिंग विज्ञापन कम्पनी के सबसे बड़े खातेदार मि. सक्सेना को पार्टी में अपने कंधों पर रखे हाथ को झटककर अंकिता उसे फटकारते हुए कहती है–"मि. सक्सेना दिस सोल्डर विलांगस टू मी.... ... अपना हाथ जगह पर रखेंगे या मैं जगह बताऊ?"[5] यह है अंकिता का प्रतिरोधी स्वर, पर इस साहस पूर्ण कार्य के लिए उसे नौकरी से निकाल दिया जाता है। अंकिता स ज्यादा नीता प्रैटिकल है। कारण–वह अपनी नौकरी के लिए बेकार का रोना नहीं रोती क्योंकि वह इस बात से चिर–परिचित है कि नौकरी और प्रतिभा दो भिन्न चीजें हैं। विज्ञापन की दुनिया में ग्लैमर को तवोज्य दी जाती है साथ ही यह भी माना जाता है कि ग्लैमरस होने से जीवन में सफलता की सिढ़ियाँ चढ़ी जा सकती है। नीता का जीवन सम्पूर्णता में पाश्चात्य के रंग से लबरेज है। वह स्वयं को लचीला बनाकर सफलता के तिलिस्म को तोड़ना चाहती है और अपने कड़वे अनुभवों के आधार पर अलग दृष्टिकोण बनाती है। वह कहती है–"यहाँ जीने की, जी पाने की पहली शर्त है– विशिष्ट दिखना, विशिष्ट करना, विशिष्ट होना, विशिष्ट बनना।"[6]

जबकि अंकिता सच्चे भारतीय स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है। अंकिता कला निर्देशकों की कामुकता, यौन–पिपासा तथा शोषण का विरोध करती है। कला के नाम पर होने वाले देह भोग का पुरजोर विरोध करती है। 'माध्यम' विज्ञापन एजेंसी की प्रबंधक होने पर भी अपनी सकारात्मक सोच के कारण मि. भोजराज को लताड़ती हुई कहती है–"अश्लीलता का आश्रय लेकर उत्पाद बेचने के विरूद्ध है.....अपनी एजेंसी को वह 'चकला' नहीं बनाना चाहती"[7] अपनी सजगता, निर्मिकता और स्वतंत्र चेतना के कारण अंकिता को अनेक षड्यंत्रों का शिकार होना पड़ता है। वह 'माध्यम' के अधिकारी पद से इस्तीफा देने को स्वीकार करती है। पर घुटने नही टेकती। अपनी गरिमा और सोच को ध्वंस कर आधुनिकता को अपनाना उसे स्वीकार्य नहीं है। दरअसल अंकिता भारतीय और पाश्चात्य दोनों वातावरण के बीच जीती है तभी तो पूरे उपन्यास में आधुनिक स्त्रो की परिभाषा अंकिता ही हो सकती है। इसीकारण गिरीराज किशोर ने 'एक जमीन अपनी' उपन्यास की प्रशंसा करते हुए कहा है कि– "चित्रा मुद्गल के इस उपन्यास को भले ही ग्लैमर और विज्ञापन की दुनिया से जोड़ा जाए, किन्तु मुख्यतः यह भारतीय स्त्री की मानसिक सीमा और उसके बाहरी जीवन के अन्तर्द्वन्द्व का उपन्यास है। खासतौर से अंकिता की सम्पूर्ण बुनावट भारतीय नारी की सोच के चारों तरफ बुनी हुई है।"[8]

उपन्यास के अन्त में सुधांशु प्रायश्चित करते हुए अंकिता को अपनाना चाहता है, तो वह उसे करारा जवाब देते हुए कहती है–"सुधांशु जी औरत बोनसाई का पौधा नहीं है, जब भी चाहा, उसकी जड़े काटकर उसे गमले में रोप दिया। वह बौना बनाएँ रखने की इस साजिश को अस्वीकार भी कर सकती है।"[9] उपन्यास में चित्रा जी ने अंकिता के माध्यम से जोर देकर कहना चाहा है कि–"पिछड़े समाज में भी एक पढ़ी–लिखी स्त्री को भो कठोर निर्णय लेने का अधिकार मिल सकता है। वशर्ते उसमें इस अधिकार की लौ–लपट को झेलने की क्षमता हो।"[10]

नीता विज्ञापन, फिल्मों में देह प्रदर्शन को स्त्री मुक्ति, स्त्री की स्वाधीनता समझती है, जबकि वास्तव में वह स्त्री की पराधीनता का नवीन संस्करण है। चित्रा जी ने नीता के रूप में ख्याति और अर्थ के पीछे भटकने वाली मध्यवर्गीय महानगरीय युवती के जीवन के हाहाकार को दिखाया है, जो खुद ही अपनी अज्ञानता, अविवेक और थोथे अहम का शिकार होती है। लेखिका द्वारा चालाक किस्म के पुरूषों द्वारा स्त्रियों के यौन शोषण बहुत ही प्रभावशाली ढंग से नीता के माध्यम से उजागर कर इस सत्य को उद्घाटित किया गया है कि "इस देश की स्त्री को यहीं का खुला हवा–पानी चाहिए। यहाँ की मिट्टी का पौधा यहीं के मौसम के अनुशासन में जी सकता है। बाहरी और उधार लिया हवा, पानी उसे पच नही सकता।"[21] तभी तो नीता अपनी पुत्री मानसी के पालन–पोषण की जिम्मेदारी अंकिता को सौपती है। अपने मृत्यु पूर्व पत्र में वह लिखती है–"अंकू! मानसी भविष्य की स्त्री को तुम्हें सौप रही हूँ– कुम्हार के हाथों में कच्ची मिट्टी सी..... तम्हारी ममता की गोद में मानसी अपने अस्तित्व की तलाश पूरी कर सकेगी–विश्वास है।"[10] वाकई नीता जो भी चाहती है– सफलता, धनख्याति, सब उसे मिलता है लेकिन अपने अर्न्तमन में स्त्री को जब मर्मान्तक चोट लगती है तो वह आत्मघात कर लेती है। जैसा की नीता करती है।

निष्कर्ष

चित्रा मुगद्ल का यह उपन्यास ग्लैमर और विज्ञापन की दुनिया में बाहरी और भीतरी मानसिक के अन्तर्द्वन्द में पिसती नारी जीवन पर आधारित है पर कहीं न कहीं अंकिता की सम्पूर्ण बुनावट भारतीय नारी के सोच को उजागर करता है।

संदर्भ–सूची

1. साक्षात्कार, बलराम, चित्रा मृदुगल का साक्षात्कार, आजकल, अंक–जुलाई–2002, पृ015
2. मनु प्रकाश– हिन्दुस्तान पत्रिका, नई दिल्ली, अंक–जनवरी–1991, पृ0 52
3. मुद्गल चित्रा– एक जमीन अपनी, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली–1990, पृ0 172
4. वही, पृ0 29
5. वही, पृ0 188
6. वही, पृ0 183
7. गिरीराज किशोर, संडे आब्जर्वर पत्रिक, अंक–जून, 1991 नई दिल्ली पृ0 14
8. मुदगल चित्रा– एक जमीन अपनी, पृ0 177
9. राजेन्द्र राव– वर्तमान साहित्य, अंक–अक्टूबर–1991, नई दिल्ली, पृ0 37
10. मुगद्ल चित्रा– एक जमीन अपनी, पृ0 205
11. वही, पृ0 206